2

कांगड़ा-वन सहकारिता प्रयोग

अवधारणा

बीसवीं सदी के तीसरे दशक तक वन विभाग ने यह जान लिया था कि वह तीव्र गति से हो रहे वन-विनाश की क्षति को साथ-साथ पूरा नहीं कर सकता । वर्ष 1935 में मद्रास में हुए वन-अधिवेशन में गहन परिचर्चा के उपरान्त वन विभाग के मुख्य अरण्यपाल श्री एच.एम. ग्लोवर ने निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुतत किया ।

"सम्मेलन में पक्के तौर पर यह राय उभरी कि असीमाङ्कित वनों की दयनीय स्थिति को देखते हुए वन प्रबन्ध की हाल की नीतियों को बदल देना चाहिए । ग्रामीण-वन बनाने की क्रियात्मकता की जांच करनी चाहिए और सरकार को एक कमेटी गठित करनी चाहिए जो यह निर्णय ले सके कि बाह्य हिमालय के प्रत्येक जिला में कौन-कौन से विशेष पग उठाने चाहिए ।"

यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुआ और वर्ष 1937 में पंजाब सरकार ने सर कॉलिन गारवेट के नेतृत्व में एक जांच कमिशन का गठन किया और उस स्थिति की जांच करके कांगड़ा जिला के लिए सिफारिशें करने का काम सौंपा । उक्त कमेटी के लिए विचारणीय विषय थे यह पता लगाना कि :-

- वनों में या पास रहने वाले लोगों को लागू वन प्रशासन पद्धति के कारण क्या-क्या कठिनाइयां झेलनी पड़ी ।
- वह कौन सा सर्वोतम ढंग है जिससे उन लोगों को वन संरक्षण के लिए प्रोत्साहित किया जाए ।
- उनका वन विभाग से सहयोग कैसे प्रोत्साहित और सुनिश्चित किया जा सके ।

इस आयोग ने सारे कांगड़ा जिला का दौरा किया और यह अवलोकन किया कि वर्तमान कुल्लू, लाहौल व स्पिति जिलों के क्षेत्रों को छोड़ कर मात्र 20 प्रतिशत अर्थात 1,63,000 एकड़ वन, वैज्ञानिक-प्रबन्धन के अन्तर्गत थे और शेष 80 प्रतिशत अर्थात 6,48,000 एकड़, वनों पर उपभोक्ताओं के अधिकारों का भारी दबाव था और यह तीव्र गति से दुर्गति को प्राप्त हो रहे थे ।

आयोग की सिफारिशें निम्नलिखित थी[3] :-

- लोग ऐसे वन प्रबन्ध के लिए सहमत हों जो सरकार द्वारा पारित सादी कार्य योजना पर आधारित हो और जिसमें जहां प्रकट तौर पर आवश्यक हो रकबा बन्द करने की भी व्यवस्था हो ।
- इसलिए सरकार को लोग प्रतिनिधियों को इस कार्य से जोड़ना चाहिए ताकि नमूना प्रदर्शन स्वीकार्य हों ।
- लोगों को यह सिखाने का पूर्ण प्रयास करना चाहिए कि संरक्षित वनों एवं शामलातों से होने वाला लाभ उन्हीं के हित में होगा ।
- लोगों को विशेष प्रतिनिधित्व देने के लिए - पंचायतों (ग्राम स्तर की चुनी हुई संस्था) का गठन करना चाहिए और वह गांव जिस क्षेत्र में हो उसके वन प्रबन्ध के बारे में उन्हें विस्तार से बताना चाहिए ।
- इस उद्देश्य के लिए प्रत्येक गांव के लिए वन-प्रबन्ध की योजना बनानी चाहिए । उस कार्य योजना में न केवल शामलातों का अपितु उन संरक्षित व आरक्षित वनों के प्रबन्ध को भी ध्यान में रखना चाहिए जिन में गांववालों के अधिकार हों । और यह योजना ऐसी बननी चाहिए जिससे-लोगों के हित में वन उत्पादों की अधिकतम फसल हो ।
- यदि सम्भव हो तो वन प्रबन्ध पर होने वाले खर्चे वन उत्पादों की बिक्री से प्राप्त धन से कर लिए जाएं । जलागम क्षेत्र के संरक्षण का मूल्य संरक्षण कर्मचारियों के वेतन खर्च से, प्रदेश के लिए कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण था, जिसका आंशिक या पूरा भुगतान सरकार द्वारा किया जाना था ।

"अत: आयोग पंचायतों के गठन के लिए एक पंचायत अधिकारी और वन-प्रबन्ध योजना तैयार करने के लिए एक वन अधिकारी नियुक्त करने की सिफारिश करता है ।अगले चरण में पंचायत का सहयोग सलाहकार की हैसियत में-गांव की वन-सम्पदा के प्रबन्धन एवं कार्ययोजना के क्रियान्वयन में लिया जाएगा । कार्य योजना के तकनीकी सुझावों का क्रियान्वयन वन विभाग द्वारा किया जाएगा और इस कार्य में लगे कर्मचारियों के अनुशासन के लिए वन-मण्डल अधिकारी उत्तरदायी होगा । पर वन मण्डल अधिकारी व पंचायतों के बीच निकट सम्बन्ध रहेगा । पंचायतें और वन मण्डल अधिकारी कुछ अन्तरालों पर ऐसे मामलों पर चर्चा हेतू बैठकों का आयोजन करेगें जिनमें सुधार लाने की आवश्यकता दिखती हो ।"

"इसके अन्तिम उद्देश्य भले ही दूरस्थ हो, यह है कि गांव की समस्त वन सम्पदा का प्रबन्ध पंचायत द्वारा अनुमोदित रूपरेखा के अनुसार अपने ही वन कर्मचारियों द्वारा एक योग्य वन अधिकारी की देखरेख में किया जाएगा । यह वन अधिकारी जिलाधीश के अधीनस्थ कार्य करेगा । इससे कर्मचारियों पर होने वाला व्यय कम होगा और गांव का लाभ भी बढ़ेगा ।"

(इन शब्दों पर जोर-लेखक की ओर से)

यह सिफारिशें-समकालिक विचारधारा से मुख्य बदलाव का प्रतिनिधित्व करती थी । इनमें यह स्वीकार किया गया था कि सर्वोच्च प्राथमिकता मिट्टी और वन संरक्षण को दी जानी थी और यह सब सम्बन्धित समुदायों की भागीदारी के बिना सम्भव नहीं था ।

गैरबेट आयोग की सिफारिशों के अनन्तर पंजाब सरकार ने अपनी रणनीति तैयार की और वर्ष 1938 में अधिसूचना[4] भी जारी कर दी । जिसमें यह आदेश जारी किया कि वन विभाग को स्थिति का जायजा लेने, योजना तैयार करने और सिफारिशों के अनुसार उसे क्रियान्वित करने के लिए अधिकृत किया जाता है ।

"प्रस्ताव के आधारभूत सिद्धान्तों को स्वीकार किया जाता है । आगामी कार्यवाही करने से पहले वन विभाग इन सिद्धान्तों के अनुरूप विस्तृत योजना बनाए कि भूक्षरण रोका जाएगा और प्रदेश के हितों की रक्षा की जाएगी ।"

ऐसे लगता है कि 1935 के सम्मेलन में जो चिन्ताएं व्यक्त की गई और इसके आधार पर पारित प्रस्ताव ने वन विभाग को नए-नए प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया । न केवल हिमाचल प्रदेश में, अपितु मध्य प्रदेश के दूरस्थ बस्तर क्षेत्र में भी ऐसी वन-सहकारी सभाएं स्थापित की गई ।

कांगड़ा वन-सहकारी सभा योजना का पर्यावलोकन

उपरोक्त आदेश के अनुसार वन विभाग ने सिफारिशों पर कार्य शुरू कर दिया । कांगड़ा में पूर्वी क्षेत्र के अरण्यपाल ने कांगड़ा वन सहकारी सभा योजना 18 जुलाई 1938 में आरम्भ कर दी और इसे क्रियान्वित करने के लिए एक पूरा वन मण्डल कांगड़ा ग्रामीण वन मण्डल (मुख्यालय धर्मशाला) के नाम से स्थापित किया गया । उलझाव-पूर्ण बन्दोवस्त और अधिकारों की अधिकता के कारण वन प्रबन्ध की उपयुक्त योजनाएं आरम्भ करना कठिन हो गया । फरवरी 1940 में पंजाब सरकार ने औपचारिक रूप से कांगड़ा वन सहकारी सभा योजना[5] को जिसे वन विभाग ने प्रस्तावित किया था स्वीकृति दे दी । सहायक अनुदान का मामला 1941 में अधिसूचित किया गया[6] । वन सहकारी सभाओं के नियमों और उपनियमों का प्रारूप तैयार करना अति कठिन था । वन विभाग, पंजीकार (सहकारी सभाएं) व कानूनी-अनुस्मारक के बीच बहुत लम्बे पत्राचार के बाद सितम्बर 1941[7] में अन्नत: नियम जारी किए गए ।

वन विभाग ने कांगड़ा वन सहकारी सभा योजना बड़े उत्साह के साथ-सहकारिता विभाग के सहयोग के साथ आरम्भ की । बारह वर्ष के लम्बे काल में कांगड़ा जिला के 2,793 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में 72 वन सहकारी सभाएं बनाई गई । सबसे बड़ा 5,094 हैक्टयर का क्षेत्र खन्यारा वन सहकारी सभा के अन्तर्गत था यह गांव धौलाधार की ढलान पर स्थित है और कांगड़ा वन मण्डल की धर्मशाला रेंज में आता है -

इस वन सहकारी सभा के अधीन 4600 हैक्टयर सीमाङ्कित संरक्षित वन और 440 हैक्टयर असीमाङ्कित संरक्षित वन आता था/है जिसका बहुत सा भाग पर्वतीय चरागाह है ।

इस वन सहकारी सभा के अन्तर्गत भूमि के कुछ भागों में स्लेट खदान का काम दशकों से बड़े जोर-शोर से होता रहा है ।

सबसे छोटे क्षेत्र वाली वन सहकारी सभा

जिसके अन्तर्गत मात्र 6 हैक्टयर शामलात भूमि आती थी/है - पालमपुर रेंज के घड़ोरल गांव में थी/है जो अब पालमपुर वन मण्डल में आता है ।

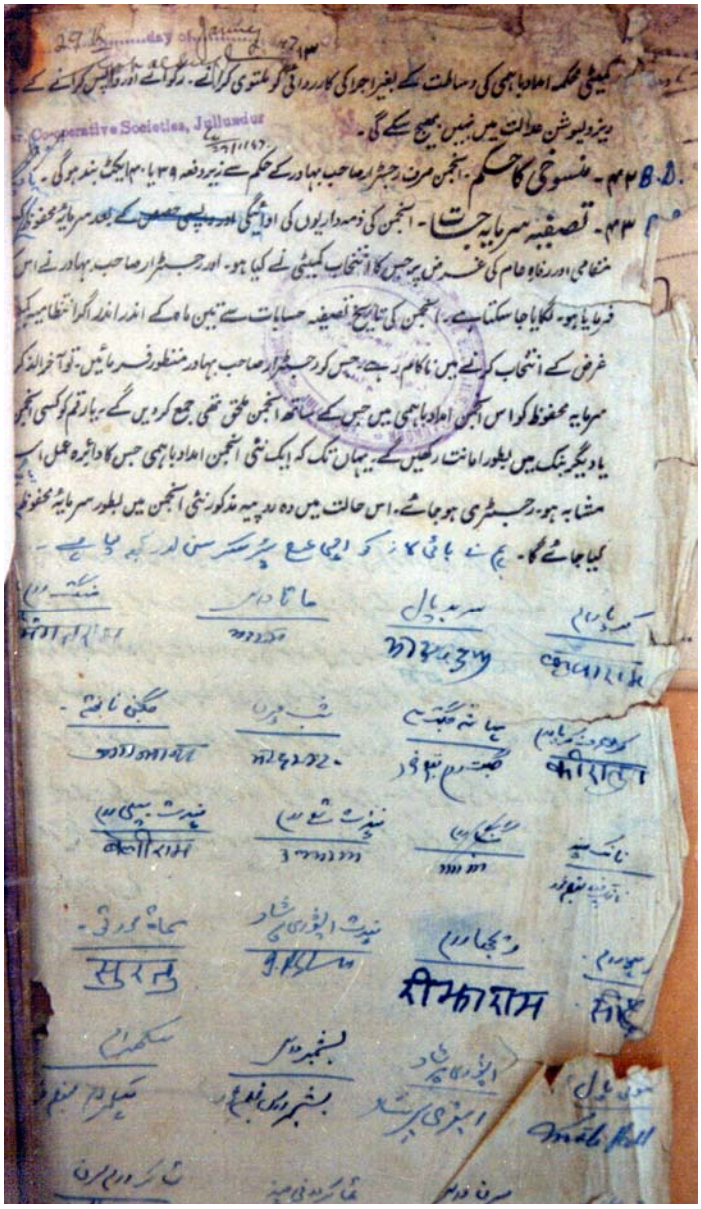

कांगरा वन सहकारी सभा मरंडा भंगियार के सदस्यों द्वारा ह 29
जनवरी 1947

के.एफ.सी.एस. मरण्डा भंगियार का नक्शा

नीति, प्रक्रियाएं और इतिहास

सरकार ने वन सहकारी सभा योजना को वार्षिक 50,000 रूपये सहायक अनुदान के प्रावधान के साथ वर्ष 1940 में पांच वर्ष के लिए स्वीकृत किया और 32 के.एफ.सी.एस. के गठन का लक्ष्य रखा । पहली के.एफ.सी.एस. के रूप में 16 नवम्बर 1941 को बहनाला सोसाईटी का पंजीकरण हुआ । सम्बन्धित भूमि का सोसाइटी को स्थानान्रण करने के बारे में अधिसूचना 26 अक्तूबर 1941 को जारी कर दी गई । वर्ष 1944-45, अर्थात स्वीकृत अवधि के अन्तिम वर्ष तक 40 के.एफ.सी.एस. 17,500 हैक्टयर क्षेत्र सम्मिलित करके गठित कर ली गई और उनके लिए अनुमोदित कार्य योजनाएं भी बना ली गई ।

निम्नलिखत शर्तो के साथ इस परियोजना अवधि को पुनर्वलोकन के उपरान्त 1 अप्रैल 1945 से आगे 5 वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया ।

1. सोसाइटियों को दी जाने वाली कुल वार्षिक सहायक अनुदान की राशि को 50,000 रूपये पर सीमित कर दिया और यह कि एक वर्ष की बचत को अगले वर्ष के लेखों मे नहीं लिया जा सकता ।

2. जब तक सहायक अनुदान राशि को 50,000 रूपये वार्षिक से बढ़ाया नहीं जाता गठन की जाने वाली सोसाइटियों की संख्या पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाएगा । इस तरह - के.एफ.सी.एस. की गठन संख्या का लक्ष्य

समाप्त कर दिया गया । लोगों के रूझान के आधार पर गठित की जाने वाली के.एफ.सी.एस. की संख्या निर्धारित करने के लिए वन विभाग को जो इस कार्य योजना के साथ नत्थी था को खुला हाथ दिया गया ।

3. जब सहायक अनुदान की राशि 50,000 रूपये की सीमां तक पहुंच जाए तब या तो इस राशि को बढ़ाने का औचित्य बताया जाए या उन सभाओं को जो बचत कर रही थी, सरकार के वित्तीय दायित्व को कुछ प्रतिशत तक उठाने के लिए प्रेरित किया जाए । इन वनों से सम्बन्धित असीमित देयताओं का भार उठाने के लिए सरकार तत्पर नहीं थी । इस तरह भुगतान न करने वाली सभाओं को वित्तीय स्वतन्त्रता देकर भुगतान करने योग्य बनाने के लिए उत्प्रेरित किया गया ।

4. उन सोसाइटियों को जिन्होंने गठन के पांच वर्ष के भीतर लाभ कमाना आरम्भ कर दिया, वन विभाग को निरीक्षण कर्मचारी वर्ग पर होने वाले खर्चो का वहन करने के लिए अर्जित लाभ का 10 प्रतिशत देना पड़ेगा । इसका अर्थ यह हुआ कि अब के.एफ.सी.एस. को वन विभाग से प्राप्त तकनीकी सेवाओं के लिए फीस देनी पड़ती थी ।

के.एफ.सी.एस. भगोटिया का कार्यालन भवन जिसके एक भाग में डाकघर है और दूसरे भाग में आयुर्वैदिक डिस्पैन्सरी भवन

वर्ष 1950 यानि बढ़ाई हुई अवधि के अन्त तक 21,600 हैक्टर भूमि को सम्मिलित करके 63 के.एफ.सी.एस. का गठन किया गया साथ ही कार्ययोजना क्रियान्वयन का काम भी चालू किया गया । इस योजना का पुर्नवलोकन किया गया और इसकी अवधि आगामी तीन वर्ष के लिए अर्थात 1953 तक बढ़ा दी गई । इस बढ़ाई गई अवधि के अन्त तक 71 के.एफ.सी.एस. का गठन हो गया जिसमें 23100 हैक्टर भूमि सम्मिलित हुई और कार्ययोजना भी चालू कर दी गई । एक-एक वर्ष की दो अवधि बढ़ोतरियां की गई और इस काल में के. एफ.सी.एस की संख्या 72 हो गई । परन्तु निरन्तर दुष्प्रबन्ध के कारण के.एफ. सी.एस. खोहाला के बन्द कर देने के कारण इनकी संख्या 71 रह गई और अब इनके अन्तर्गत आने वाली भूमि 23500 हैक्टर थी

इस समय तक के.एफ.सी.एस. को कार्य करते 15 वर्ष हो चुके थे और इनके कार्य को अनुकरणीय माना गया । मार्च 31, 1956 तक की एक वर्षीय बढ़ोतरी के दौरान सहायक अनुदान की राशि बढ़ा कर 90,000 रूपये कर दी गई । इस राशि बढ़ोतरी की शर्ते यह थी कि अतिरिक्त राशि हमीरपुर और नूरपुर तहसीलों में के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए खर्च की जाएगी ।

परन्तु वर्ष 1956 में राजनैतिक इच्छाशक्ति जिसका समर्थन इस योजना को प्राप्त था-हटा ली गई । सब प्रारम्भिक प्रक्रियाओं, जिनमें सदस्यों के सहमति पत्र शामिल थे; को पूर्ण कर लेने पर भी-दो के.एफ.सी.एस. जिनका गठन हमीरपुर में किया गया-को अधिसूचित नहीं किया गया और वे कभी औपचारिक अस्तित्व में नहीं आई । के.एफ.सी.एस. की संख्या 71 पर टिक गई और स्वीकृत सहायक अनुदान की राशि भी 50,000 रूपये ही रही ।

मौजूदा के.एफ.सी.एस. के लिए योजना का परिचालन एक-एक वर्ष करके आगामी पांच वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया और यह अवधि मार्च 1961 तक समाप्त होनी थी । दुगा बख्शियां-राजपलवान हौड़ी के.एफ.सी.एस. की अधिसूचना सदस्यों में होने वाले निरन्तर झगड़ों के कारण-रद्द कर दी गई और अब के. एफ.सी.एस की संख्या घट कर 70 रह गई, जिसमें 44 कांगड़ा वन मण्डल और 26 नूरपुर वन मण्डल में थीं । (रावल 1968) यह के.एफ.सी.एस. अब

23600 हैक्टयर वन-भूमि का प्रबन्ध कर रही थी; जो कांगड़ा जिला की कूल वन-भूमि का 10 प्रतिशत बनता था ।

योजना अवधि की 10 वर्ष की अन्तिम बढ़ोतरी यानि (1961 से 1971) के दौरान सरकार ने 50,000 रूपये का वार्षिक सहायक अनुदान बन्द कर दिया और के.एफ.सी.एस. द्वारा आर्जित आय को उन्हें वापिस लौटाने का निर्णय लिया । नई के.एफ.सी.एस. के गठन रोकने के लिए विशेष आदेश जारी किए गए । सरकार के राजस्व-व्यय में कटौती के कारण वन विभाग पर दबाव बढ़ा और 1950 से 1955 तक गठित की गई के.एफ.सी.एस. के लिए यह घातक प्रहार सिद्ध हुआ क्योंकि इन सभाओं के अन्तर्गत वन अभी संपोषण की स्थिति में थे । तथा कम आय होने के कारण अपने कर्मचारी वर्ग को वेतन देने की स्थिति में नहीं थे ।

वर्ष 1971 में कांगड़ा नव गठित प्रदेश हिमाचल प्रदेश में सम्मिलित हुआ । हिमाचल प्रदेश के वन विभाग ने इन के.एफ.सी.एस. के कानूनों को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया - कि वे अपने वनों का स्वयं प्रबन्ध करते हैं । और यह आग्रह किया कि क्षेत्रीय कार्य-योजना के अनुसार वे अपने कर्मचारियों से ही प्रबन्ध कार्य चलाए । इसके बाद का घटना क्रम यह था कि इस योजना की कानूनी स्थिति के बारे में भ्रान्ति पैदा हुई और विभिन्न विभागों ने अपना समर्थन इस तरह, एक सांझे वन प्रबन्ध की एक पहल से, वापिस ले लिया । इस सब के बावजूद बहुत सी सभाएं कार्य कर रही हैं, और मान्यता प्राप्त करने का प्रयास कर रही हैं ।

के.एफ.सी.एस. के विकास के महत्वपूर्ण मील पत्थर संक्षेप में नीचे दिए गए है - प्रत्येक के.एफ.सी.एस. के गठन की तिथि और उसके अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र का ब्यौरा तालिका 1 में दिया गया है ।

तालिका 1 : के.एफ.सी.एस. के विकास महत्वपूर्ण मील-पत्थर		
वर्ष	घटनाएं	महत्व
1935	राष्ट्रीय-वन-सम्मेलन में कांगड़ा के क्षेत्रों के लिए वैकल्पिक कार्य-कौशल खोजने के लिए प्रस्ताव पारित हुआ	के.एफ.सी.एस. की अवधारणा समुदाय व विभिन्न विभागों को समीप लाई योजना की जड़े मजबूत हुई
1937	पंजाब सरकार द्वारा गारबेट आयोग योजना-कार्य-कौशल पर सुझाव देने के लिए गठन किया, सिफारिशें की व निष्कर्ष बताए गए ।	
1938	गारवेट कमिशन की सिफारिशों के अनुसार योजना तैयार करने के लिए वन विभाग को आदेश दिए ।	
जुलाई 1938	वन विभाग ने के.एफ.सी.एस. योजना लागू की	
फरवरी 1940	पंजाब सरकार ने योजना को स्वीकृति दी	
जनवरी 1941	पंजाब सरकार ने के.एफ.सी.एसा. को सहायक अनुदान देने के लिए शर्तें तय की और अधिसूचना की	
सितम्बर 1941	पंजाब सरकार ने के.एफ.सी.एस. के नियम अधिसूचित किए ।	
1940-45	के.एफ.सी.एस. योजना को पांच वर्ष के लिए स्वीकृति दी । 32 के लक्ष्य के सामने 40 सभाएं स्थापित हुई । सहायक अनुदान राशि 50,000 रूपये निश्चित हुई ।	
1945-50	योजना अवधि आगामी पांच वर्ष के लिए बढ़ाई गई और कुल 63 के.एफ.सी.एस. का गठन कर लिया गया ।	
1950-53	योजना अवधि तीन वर्ष और बढ़ाई गई और 23100 है. भूमि सम्मिलित करके 71 सभाएं गठित की गई ।	
1953-54	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई और 23800 है. भूमि सम्मिलित करके 72 के.एफ.सी.एस. गठित की गई ।	
1954-55	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई के.एफ.सी.एस. खोहाला बन्द की गई और अब उनकी संख्या 71 रह गई सम्मिलित क्षेत्र 23500 है. था । के.एफ.सी.एस. के प्रयोग पर शंकाए व्यक्त करने मुख्यमन्त्री का पत्र प्राप्त हुआ ।	
1955-56	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई सहायक अनुदान बढ़ा कर 90,000 रूपये कर दी गई ताकि नूरपुर और हमीरपुर तहसीलों में भी के.एफ.सी.एस. का गठन किया जाए किन्तु मुख्यमन्त्री के शंका-युक्त के कारण हमीरपुर की दो के.एफ.सी.एस. अधिसूचित नहीं की गई ।	समस्याएं उभरने लगी

तालिका 1 : के.एफ.सी.एस. के विकास महत्वपूर्ण मील-पत्थर		
1956-57	योजना अवधि 1 वर्ष के लिए बढ़ाई गई और के.एफ.सी.एस. की संख्या 71 पर टिक गई	आगे कैसे चला जाए इस बार सरकार अनिश्चिय से ग्रस्त के.एफ.सी.एस. हिमाचल को स्थानान्तरित हुई नए समीकरण और सम्बन्ध तलाशे गए
1957-58	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई और के.एफ.सी.एस. की संख्या 71 पर टिक गई ।	
1958-59	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई पर के.एफ.सी.एस. की संख्या 71 पर टिकी रही	
1959-60	ढुगा-वरिशयां-राजपलवान-हौडी की के.एफ.सी.एस. की अधिसूचना रद्द कर दी गई सम्भत: आंतरिक कलह के कारण-अब के.एफ.सी. एस. की संख्या 70 रह गई	
1960-61	योजना अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ाई पर के.एफ.सी.एस. की संख्या अब 70 रह गई ।	
1961-71	पंजाब सरकार ने योजना अवधि 10 वर्ष और बढ़ा दी । 50,000 रूपये का वार्षिक सहायक अनुदान भी बन्द कर दिया । और के. एफ.सी.एस. से हुई आय को आवश्यक सेवा-खर्चो को काट कर उन्हें लौटाने का निर्णय हुआ ।	
1966	पंजाब के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप कांगड़ा जिला हिमाचल प्रदेश का भाग बन गया ।	
1967	वनों का राष्ट्रीयकरण हुआ । वन उत्पादों यथा इमारती लकड़ी, बरोजा एवं अन्य के इक्टठा करने एवं बिक्री के प्रबन्ध के लिए एक निगम की स्थापना की गई । इस तरह के.एफ.सी.एस. दो मुख्य आय स्रोतों से वंचित हुई ।	
1968-1969	रावल की कार्य योजना 70 के.एफ.सी.एस. पर प्रभावी तौर पर लागू हुई ।	
1971	जनवरी 25 वर्ष 1971 को हिमाचल को पूर्ण राज्यत्व मिला । योजना अवधि को बढ़ोतरी नहीं मिली और यह अवधि समाप्त हो गई । वन विभाग ने तकनीकी समर्थन बन्द कर दिया- रावल की कार्य योजना के अनुसार के.एफ.सी.एस. का कार्य अपने हाथ में ले लिया । के.एफ.सी.एस. की आय सिमट कर तुच्छ रह गई-केवल सहकारी विभाग से सहायता मिलती रही ।	

1972-73	हिमाचल सरकार ने के.एफ.सी.एस. योजना को दो वर्ष के लिए बढ़ा दिया पर उपरोक्त स्थिति बनी रही । सहायक अनुदान के.एफ.सी. एस. को वर्ष 1980 में उपलब्ध हुआ ।	गैर मिलनसारी के कारण एक दूसरे के विरूद्ध कार्य करने से भ्रान्ति फैली किन्तु उपरी स्तर पर इससे उबरने के प्रयास चले रहे
1973	अरण्यपाल धर्मशाला ने सभी के.एफ.सी.एस. का पुनर्वलोकन किया और उनमें से 29 को दुर्दशा ग्रस्त पाया ।	
1974	हिमाचल सरकार ने वन उपयोग समिति को के.एफ.सी.एस. योजना की जांच करके सिफारिशें करने का काम सौंपा ।	
1977	वन उपयोग समिति समाप्त कर दी गई वह भी इससे पहले की वह उपरोक्त कार्य कर पाती ।	
1983	रावल कार्ययोजना का कार्य काल समाप्त हुआ । वन विभाग ने अब के.एफ.सी.एस. के अन्तर्गत आने वाले वनों को विभिन्न वन मण्डलों के लिए बनाई कार्य योजना में सम्मिलित कर लिया ।	
1989	अरण्यपाल धर्मशाला वृत्त ने के.एफ.सी.एस. के अन्तर्गत आने वाले वनों को अपने नियमित कार्य योजना में सम्मिलित कर अपने हाथ में लेने के निर्देश[8] जारी किए । वन मन्त्री व परिवहन मन्त्री ने इसका विरोध किया ।	
1990	के.एफ.सी.एस. के दबाव से बाध्य होकर के.एफ.सी.एस. को पुनः अच्छी हालत में लाने के लिए छानबीन के लिए एक और कमेटी अधिसूचित की	
1992	हिमाचल की विधान सभा राजनैतिक कारणों से भंग कर दी गई और उक्त कमेटी अपना कार्य पूरा न कर सकी ।	
1996	32 के.एफ.सी.एस. ने इक्टठा होकर जिला स्तर पर जिला वन सहकारी सभाएं बनाने और न्याय के लिए लड़ने का मन बनाया ।	
मार्च 2000	के.एफ.सी.एस. के सम्मुख चुनौतियों और समस्याओं पर राज्य स्तर की संवाद गोष्ठी हुई जिसकी अध्यक्षता सहकारिता मन्त्री ने की । के.एफ.सी.एस. को पुर्नजीवित करने पर वन, सहकारिता विभागों में सर्व-सम्मति बनी ।	